ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL**04292**
RNI REG. NO. UPBIL/**2014/66218** **PP. No.- 240-243**
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- III, Issues-41, YEAR- July-Sept. 2026

बौद्ध धर्म में महिलाओं की स्थिति :(एक ऐतिहासिक एवं सामाजिक– धार्मिक अध्ययन)

डॉ0 अमित कुमार सिंह
सहायक प्राध्यापक– पालि भाषा विभाग, ए0 एन0 एस0 कॉलेज, जहानाबाद (बिहार) भारत

Received-05.08.2026, Revised-14.08.2026, Accepted-21.08.2026, E-mail:profamitsingh70@gmail.com

सारांशः बौद्ध धर्म के उदय ने प्राचीन भारतीय समाज में स्त्रियों की धार्मिक एवं सामाजिक स्थिति के संबंध में एक महत्वपूर्ण वैचारिक परिवर्तन प्रस्तुत किया। जिस समय गौतम बुद्ध का आविर्भाव हुआ, उस समय भारतीय समाज में स्त्री की भूमिका मुख्यतः परिवार, विवाह, मातृत्व और गृहस्थ जीवन से निर्धारित होती थी। धार्मिक एवं दार्शनिक क्षेत्रों में उसकी स्वतंत्र भागीदारी सीमित थी। बुद्ध ने मनुष्य की आध्यात्मिक क्षमता को जन्म, जाति और लिंग के बजाय उसके कर्म, नैतिक आचरण और प्रज्ञा से जोड़ा। इसी दृष्टिकोण का परिणाम था कि महिलाओं को बौद्ध संघ में प्रवेश का अवसर मिला और भिक्षुणी संघ की स्थापना हुई। महाप्रजापती गौतमी के नेतृत्व में महिलाओं के लिए संन्यास का मार्ग खुलना प्राचीन भारतीय धार्मिक इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना थी।

हालाँकि बौद्ध परंपरा में महिलाओं को आध्यात्मिक मुक्ति की समान क्षमता प्रदान करने के साथ–साथ भिक्षुणियों पर अनेक अनुशासनात्मक प्रतिबंध भी लगाए गए। विशेष रूप से अष्ट–गरुधम्मों ने भिक्षुणी संघ को भिक्षु संघ के अधीनस्थ स्वरूप में रखा। इस कारण बौद्ध धर्म में महिलाओं की स्थिति को केवल 'पूर्ण समानता' या 'पूर्ण असमानता' के किसी एक दृष्टिकोण से समझना उचित नहीं है। प्रारंभिक बौद्ध साहित्य, विशेषकर थेरीगाथा, महिलाओं की आध्यात्मिक उपलब्धियों, स्वतंत्र चिंतन और मुक्ति–अनुभव का अत्यंत महत्वपूर्ण प्रमाण प्रस्तुत करता है।

प्रस्तुत लेख में बौद्ध धर्म के उदय से लेकर समकालीन काल तक महिलाओं की स्थिति का ऐतिहासिक, धार्मिक, सामाजिक और वैचारिक विश्लेषण किया गया है। इसमें महाप्रजापती गौतमी, खेमा, पटाचारा, धम्मदिन्ना आदि भिक्षुणियों के योगदान, भिक्षुणी संघ की स्थापना, बौद्ध ग्रंथों में स्त्री की अवधारणा, गृहस्थ महिलाओं की भूमिका, विभिन्न बौद्ध परंपराओं में महिलाओं की स्थिति तथा आधुनिक काल में भिक्षुणी दीक्षा और लैंगिक समानता के आंदोलनों का विवेचन किया गया है।

कुंजीभूत शब्द– बौद्ध धर्म, महिला, भिक्षुणी संघ, महाप्रजापती गौतमी, थेरीगाथा, स्त्री–मुक्ति, लैंगिक समानता, बुद्ध, सामाजिक परिवर्तन।

प्रस्तावना– भारतीय सामाजिक इतिहास में महिलाओं की स्थिति का अध्ययन केवल पारिवारिक जीवन तक सीमित नहीं किया जा सकता। धर्म, शिक्षा, संपत्ति, राजनीतिक भागीदारी, आध्यात्मिक स्वतंत्रता और सामाजिक प्रतिष्ठा जैसे अनेक आयाम महिलाओं की वास्तविक स्थिति को निर्धारित करते हैं। प्राचीन भारत में धार्मिक संस्थाएँ सामाजिक संरचना को प्रभावित करने वाली प्रमुख शक्तियों में थीं। इसलिए बौद्ध धर्म में महिलाओं को प्राप्त स्थान का अध्ययन भारतीय समाज में स्त्री की बदलती भूमिका को समझने की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है।

छठी–पाँचवीं शताब्दी ईसा पूर्व के आसपास उत्तर भारत में बौद्ध धर्म का उदय हुआ। यह वह समय था जब वैदिक–ब्राह्मणीय धार्मिक व्यवस्था के साथ–साथ श्रमण परंपराएँ भी विकसित हो रही थीं। बौद्ध आंदोलन ने कर्मकांड की अपेक्षा नैतिकता, करुणा, प्रज्ञा और निर्वाण को महत्व दिया। बुद्ध ने मनुष्य की श्रेष्ठता को जन्म या सामाजिक स्थिति के आधार पर निर्धारित करने के बजाय उसके आचरण और मानसिक विकास से जोड़ा।

महिलाओं के संदर्भ में यह दृष्टिकोण महत्वपूर्ण था। बुद्ध के संघ में प्रारंभ में केवल पुरुषों को प्रवेश मिला, किंतु बाद में महाप्रजापती गौतमी के आग्रह और आनंद के हस्तक्षेप के बाद महिलाओं के लिए भी भिक्षुणी संघ की स्थापना की परंपरा विकसित हुई। इस घटना ने महिलाओं को गृहस्थ जीवन से बाहर निकलकर स्वतंत्र धार्मिक–साधना का अवसर प्रदान किया।

थेरीगाथा इस परिवर्तन का सबसे महत्वपूर्ण साहित्यिक प्रमाण है। इसमें प्रारंभिक बौद्ध भिक्षुणियों द्वारा रचित पद्य संकलित हैं और यह महिलाओं के प्राचीनतम उपलब्ध साहित्यिक स्वर–संग्रहों में से एक माना जाता है। इसमें मातृत्व, वैवाहिक जीवन, सामाजिक पीड़ा, शोक, शरीर, इच्छा और अंततः आध्यात्मिक मुक्ति के अनुभवों को स्वयं महिलाओं की आवाज में व्यक्त किया गया है।

अतः बौद्ध धर्म में महिलाओं की स्थिति का अध्ययन दो परस्पर संबंधित पक्षों से किया जाना चाहिएकृएक ओर बौद्ध धर्म द्वारा प्रदान किए गए आध्यात्मिक अवसर और दूसरी ओर संस्थागत एवं सामाजिक सीमाएँ।

बौद्ध धर्म से पूर्व भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति– बौद्ध धर्म के उदय से पूर्व भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति एकरूप नहीं थी। विभिन्न क्षेत्रों, समुदायों और सामाजिक वर्गों में उनके अधिकार और दायित्व अलग–अलग थे। तथापि उत्तर वैदिक काल में सामाजिक व्यवस्था अधिक पितृसत्तात्मक होती गई और स्त्री की सामाजिक पहचान का प्रमुख आधार विवाह एवं परिवार बनता गया। धार्मिक शिक्षा और सार्वजनिक धार्मिक विमर्श में पुरुषों की प्रधानता थी। महिलाओं के लिए गृहस्थ जीवन ही सामान्य सामाजिक आदर्श था। विधवा, अविवाहित महिला अथवा परिवार से बाहर स्वतंत्र जीवन जीने वाली महिलाओं को अनेक सामाजिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। इसी पृष्ठभूमि में बौद्ध भिक्षुणी संघ का उदय महत्वपूर्ण बनता है। संघ में प्रवेश ने महिला को एक वैकल्पिक सामाजिक एवं आध्यात्मिक पहचान प्रदान की। थेरीगाथा की अनेक कविताओं में हमें महिलाओं द्वारा पति, परिवार, मातृत्व, गरीबी, शोक और सामाजिक बंधनों से आगे बढ़कर आध्यात्मिक स्वतंत्रता प्राप्त करने की अभिव्यक्ति मिलती है।

बुद्ध का स्त्रियों के प्रति दृष्टिकोण– बौद्ध दर्शन का मूल सिद्धांत है कि दुःख सार्वभौमिक है और उससे मुक्ति का मार्ग सभी मनुष्यों के लिए उपलब्ध है। चार आर्य सत्य, अष्टांगिक मार्ग, शील, समाधि और प्रज्ञा जैसे सिद्धांतों में व्यक्ति की आध्यात्मिक क्षमता को उसके लिंग से निर्धारित नहीं किया गया है। यही कारण है कि प्रारंभिक बौद्ध साहित्य में अनेक महिलाओं को उच्च आध्यात्मिक उपलब्धि प्राप्त करने वाली व्यक्तियों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। थेरीगाथा में भिक्षुणियों के अनुभव इस बात का प्रमाण देते हैं कि महिलाएँ केवल संघ की अनुयायी नहीं थीं, बल्कि वे शिक्षिका, साधिका और आध्यात्मिक मार्गदर्शक भी बनीं। आधुनिक विद्वानों ने भी प्रारंभिक भिक्षुणियों को बौद्ध आध्यात्मिक परंपरा की 'उंजमते' अथवा उच्च साधना प्राप्त शिक्षिकाओं के रूप में विश्लेषित किया है। इस दृष्टि से बौद्ध धर्म का एक महत्वपूर्ण योगदान यह था कि उसने आध्यात्मिक मुक्ति को पुरुषों का एकाधिकार नहीं माना।

महाप्रजापती गौतमी और भिक्षुणी संघ की स्थापना– बौद्ध धर्म में महिलाओं की स्थिति के इतिहास में महाप्रजापती गौतमी का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। वे बुद्ध की मौसी और पालक माता थीं। परंपरागत बौद्ध ग्रंथों के अनुसार उन्होंने महिलाओं को संघ में

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

प्रवेश देने की मांग की। प्रारंभ में बुद्ध की ओर से अनिच्छा व्यक्त की गई, लेकिन आनंद ने प्रश्न किया कि क्या महिलाएँ भी बुद्धत्व अथवा मुक्ति प्राप्त करने में सक्षम हैं। इसके बाद महिलाओं के संघ प्रवेश को स्वीकार किया गया। इस प्रकार महाप्रजापती गौतमी पहली भिक्षुणी बनीं और भिक्षुणी संघ की परंपरा का आरंभ हुआ। यह घटना केवल धार्मिक संस्थान का विस्तार नहीं थी, बल्कि महिलाओं के लिए एक नए सामाजिक विकल्प का निर्माण भी थी। भिक्षुणी संघ में प्रवेश के बाद महिलाओं कोः धार्मिक शिक्षा प्राप्त करने, ध्यान और साधना करने, उपदेश देने, संघीय जीवन में भाग लेने, आध्यात्मिक नेतृत्व विकसित करने का अवसर मिला। इस परिवर्तन को प्राचीन भारतीय समाज की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माना जा सकता है।

अष्ट–गरुधम्म और महिलाओं की सीमित समानता– बौद्ध धर्म में महिलाओं के प्रवेश का दूसरा पक्ष भी है। भिक्षुणी संघ की स्थापना के साथ आठ विशेष नियमों, जिन्हें गरुधम्म कहा जाता है, की परंपरा जुड़ी है। इन नियमों में भिक्षुणियों को अनेक परिस्थितियों में भिक्षुओं के प्रति अधीनस्थ स्थिति में रखा गया। उदाहरण के लिए, वरिष्ठता की दृष्टि से भी भिक्षुणियों को भिक्षुओं के प्रति सम्मान का विशेष दायित्व दिया गया। यही कारण है कि आधुनिक विद्वानों के बीच बौद्ध धर्म में महिलाओं की स्थिति को लेकर व्यापक बहस हुई है। कुछ विद्वान इसे प्राचीन समाज की पितृसत्तात्मक संरचना का प्रभाव मानते हैं, जबकि कुछ विद्वान इन नियमों की प्रामाणिकता, विकास और व्याख्या पर प्रश्न उठाते हैं। इसलिए बौद्ध धर्म में महिलाओं की स्थिति का संतुलित मूल्यांकन आवश्यक है। एक ओर उन्हें संघ में प्रवेश और निर्वाण का अवसर मिला, दूसरी ओर संस्थागत स्तर पर पुरुष संघ को उच्चतर स्थान मिला। इसे 'आध्यात्मिक समावेश और संस्थागत असमानता का सह–अस्तित्व' कहा जा सकता है।

थेरीगाथा में महिलाओं की आवाज– महिलाओं की स्थिति के अध्ययन के लिए थेरीगाथा सबसे महत्वपूर्ण स्रोतों में से एक है। यह पाली बौद्ध साहित्य का ग्रंथ है जिसमें वरिष्ठ भिक्षुणियों की रचनाएँ संकलित हैं। आधुनिक अध्ययन इसे प्रारंभिक महिला साहित्य के अत्यंत महत्वपूर्ण स्रोत के रूप में देखते हैं। इस ग्रंथ की विशेषता यह है कि इसमें महिलाओं के जीवन को पुरुषों की दृष्टि से नहीं बल्कि महिलाओं की अपनी आवाज में प्रस्तुत किया गया है। पटाचारा के जीवन में व्यक्तिगत त्रासदी और शोक के बाद आध्यात्मिक मुक्ति का चित्र मिलता है। किसागोतमी का प्रसंग मातृत्व और मृत्यु के अनुभव से जुड़ा है। अन्य भिक्षुणियाँ विवाह, पारिवारिक बंधन, सामाजिक असुरक्षा और सांसारिक इच्छाओं से मुक्ति की चर्चा करती हैं। इस प्रकार थेरीगाथा केवल धार्मिक कविता नहीं है; यह प्राचीन भारतीय महिला–अनुभव का सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक दस्तावेज भी है।

प्रमुख बौद्ध महिला व्यक्तित्व– महाप्रजापती गौतमीः महाप्रजापती गौतमी को बौद्ध भिक्षुणी परंपरा की अग्रणी महिला माना जाता है। उन्होंने महिलाओं के संघ प्रवेश के लिए पहल की और स्वयं भिक्षुणी जीवन अपनाया। परंपरा में उन्हें भिक्षुणियों में वरिष्ठता के लिए विशेष स्थान प्राप्त है।

खेमाः खेमा बुद्ध की प्रमुख महिला शिष्यों में गिनी जाती हैं। उन्हें प्रज्ञा और बौद्धिक क्षमता के लिए विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त थी। इससे स्पष्ट होता है कि बौद्ध संघ में महिलाओं की भूमिका केवल धार्मिक अनुयायी की नहीं थी।

धम्मदिन्नाः धम्मदिन्ना को बौद्ध साहित्य में एक विदुषी और प्रभावशाली शिक्षिका के रूप में प्रस्तुत किया गया है। उनके संवादों में गहन दार्शनिक समझ दिखाई देती है। इससे पता चलता है कि महिलाओं ने बौद्ध दर्शन की व्याख्या व प्रसार में योगदान दिया।

पटाचाराः पटाचारा का जीवन दुःख, पारिवारिक त्रासदी और आध्यात्मिक परिवर्तन की कथा है। उनका उदाहरण बताता है कि बौद्ध संघ महिलाओं के लिए व्यक्तिगत संकट से उबरने और नया जीवन प्राप्त करने का माध्यम भी बन सकता था।

किसागोतमीः किसागोतमी का चरित्र मृत्यु और शोक के बौद्ध दार्शनिक विश्लेषण से जुड़ा है। उनके माध्यम से बौद्ध धर्म ने व्यक्तिगत दुःख को सार्वभौमिक मानवीय अनुभव से जोड़कर देखने की शिक्षा दी।

गृहस्थ महिलाओं की स्थिति– बौद्ध धर्म में सभी महिलाएँ भिक्षुणी नहीं बनीं। बड़ी संख्या में महिलाएँ गृहस्थ उपासिका के रूप में बौद्ध धर्म से जुड़ी रहीं। वे बुद्ध, धर्म और संघ के प्रति श्रद्धा रखती थीं तथा दान, धार्मिक अनुष्ठान और संघ के संरक्षण में योगदान देती थीं। बौद्ध संघ की आर्थिक एवं सामाजिक संरचना में गृहस्थ महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण थी। वे भोजन, वस्त्र, निवास और अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति में योगदान देती थीं। इस प्रकार बौद्ध धर्म में महिला की भूमिका दो प्रमुख रूपों में विकसित हुईकृभिक्षुणी और उपासिका। यह विभाजन महत्वपूर्ण है क्योंकि बौद्ध धर्म में महिला–मुक्ति का अर्थ केवल संन्यास नहीं था। गृहस्थ जीवन में भी नैतिकता, दान, ध्यान और धार्मिक आचरण के माध्यम से आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग उपलब्ध था।

शिक्षा और बौद्धिक क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका– प्रारंभिक बौद्ध धर्म में कुछ महिलाओं ने धार्मिक एवं दार्शनिक विमर्श में महत्वपूर्ण स्थान बनाया। भिक्षुणियों को सूत्रों, ध्यान–पद्धतियों और विनय का अध्ययन करने का अवसर मिला। धम्मदिन्ना जैसे उदाहरण यह सिद्ध करते हैं कि महिलाएँ बौद्ध दार्शनिक विषयों पर तर्कपूर्ण संवाद करने में सक्षम थीं। अंगुत्तर निकाय में बुद्ध द्वारा विशिष्ट गुणों के लिए अनेक भिक्षुणियों को प्रमुख स्थान दिए जाने की परंपरा भी मिलती है। आधुनिक शोध में ऐसी तेरह भिक्षुणियों का उल्लेख मिलता है जिन्हें विभिन्न क्षेत्रों में उत्कृष्ट माना गया। इस प्रकार बौद्ध धर्म ने महिलाओं की शिक्षा और बौद्धिक क्षमता के लिए एक वैकल्पिक संस्थागत वातावरण उपलब्ध कराया।

बौद्ध धर्म में महिला और आध्यात्मिक मुक्ति– बौद्ध धर्म में महिला की स्थिति का सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न हैकृक्या महिला निर्वाण प्राप्त कर सकती है? प्रारंभिक बौद्ध परंपरा में अनेक भिक्षुणियों को अरहंत के रूप में प्रस्तुत किया गया है। थेरीगाथा में उनकी आध्यात्मिक अनुभूतियाँ स्पष्ट रूप से व्यक्त हुई हैं। आधुनिक शोध भी यह रेखांकित करता है कि प्रारंभिक भिक्षुणियों को बौद्ध परंपरा में आध्यात्मिक सिद्धि प्राप्त व्यक्तियों के रूप में स्वीकार किया गया था। हालाँकि कुछ बाद की बौद्ध परंपराओं में महिला और बुद्धत्व के संबंध को लेकर भिन्न धारणाएँ विकसित हुईं। उदाहरण के लिए, कुछ थेरवाद परंपरागत व्याख्याओं में पूर्ण बुद्धत्व प्राप्त करने के संदर्भ में महिलाओं पर प्रतिबंधात्मक धारणाएँ दिखाई देती हैं, जबकि अरहंतत्व और निर्वाण की उपलब्धि का प्रश्न अलग ढंग से प्रस्तुत होता है। महायान बौद्ध साहित्य में दूसरी ओर ऐसी कथाएँ मिलती हैं जो स्त्री–पुरुष भेद को आध्यात्मिक दृष्टि से चुनौती देती हैं। इससे स्पष्ट होता है कि बौद्ध धर्म के विभिन्न संप्रदायों में महिला और आध्यात्मिकता के प्रश्न का विकास एक समान नहीं रहा।

बौद्ध धर्म में महिलाओं की स्थिति पर पितृसत्तात्मक प्रभाव– बौद्ध दर्शन के मूल सिद्धांतों और बौद्ध संस्थाओं की सामाजिक संरचना में अंतर करना आवश्यक है। बौद्ध धर्म का नैतिक दर्शन मनुष्य के कर्म और मानसिक विकास को महत्व देता है, लेकिन ऐतिहासिक बौद्ध समाज उन समाजों से पूरी तरह अलग नहीं था जिनमें वह विकसित हुआ। भिक्षु संघ का प्रभाव अधिक होने, सामाजिक संसाधनों पर पुरुषों के नियंत्रण और पितृसत्तात्मक पारिवारिक व्यवस्था के कारण भिक्षुणियों की संस्थागत स्वतंत्रता सीमित रही। कुछ विद्वानों ने यह तर्क दिया है कि बौद्ध ग्रंथों के निर्माण और संहिताकरण में पुरुष–प्रधान दृष्टिकोण का प्रभाव रहा हो सकता

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- III, Issues-41, YEAR- July-Sept. 2026

है। दूसरी ओर, कुछ विद्वान यह भी सावधान करते हैं कि आधुनिक लैंगिक अवधारणाओं को सीधे प्राचीन ग्रंथों पर लागू करने से ऐतिहासिक संदर्भ की उपेक्षा हो सकती है। बौद्ध ग्रंथों में महिलाओं से संबंधित कुछ कथनों की व्याख्या अनुवाद, पाठ–परंपरा और सामाजिक संदर्भ के कारण विवादित रही है। इसलिए बौद्ध धर्म में महिलाओं की स्थिति का अध्ययन ऐतिहासिक संदर्भ और आलोचनात्मक पाठ–विवेचन दोनों के आधार पर किया जाना चाहिए।

विभिन्न बौद्ध परंपराओं में महिलाओं की स्थिति– बौद्ध धर्म के प्रसार के साथ महिलाओं की स्थिति में क्षेत्रीय और संप्रदायगत विविधता उत्पन्न हुई। थेरवाद परंपरा में भिक्षुणी संघ की परंपरा भारत और श्रीलंका में लंबे समय तक रही, लेकिन बाद में अनेक क्षेत्रों में उसका लोप हुआ। आधुनिक काल में थेरवाद भिक्षुणी परंपरा के पुनरुद्धार के प्रयास हुए हैं। महायान परंपरा में चीन, कोरिया, जापान और वियतनाम आदि क्षेत्रों में महिलाओं की मठवासी परंपराएँ विकसित हुईं। भिक्षुणी परंपरा का संस्थागत अस्तित्व इन क्षेत्रों में अपेक्षाकृत अधिक निरंतर रहा। तिब्बती बौद्ध परंपरा में भी आधुनिक समय में महिलाओं की धार्मिक शिक्षा और पूर्ण दीक्षा से संबंधित महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। हिमालयी बौद्ध समाजों में महिला मठवासियों की उच्च शिक्षा तथा धार्मिक नेतृत्व के अवसरों का विस्तार हुआ है। इस प्रकार 'बौद्ध धर्म में महिलाओं की स्थिति' को एक सार्वभौमिक और स्थिर स्थिति के रूप में देखना उचित नहीं है।

आधुनिक काल में भिक्षुणी आंदोलन– आधुनिक काल में बौद्ध महिलाओं की स्थिति को लेकर सबसे महत्वपूर्ण आंदोलनों में से एक भिक्षुणी संघ के पुनरुद्धार का आंदोलन है। विशेषकर थेरवाद देशों में महिलाओं की पूर्ण दीक्षा को लेकर धार्मिक, कानूनी और परंपरागत बहसें हुई हैं। समकालीन बौद्ध नारीवादी विमर्श यह प्रश्न उठाता है कि यदि बुद्ध ने महिलाओं की आध्यात्मिक क्षमता को स्वीकार किया था, तो उन्हें धार्मिक नेतृत्व और पूर्ण मठवासी अधिकारों से वंचित क्यों रखा जाए? आधुनिक बौद्ध नारीवादी चिंतन में महाप्रजापती गौतमी की भूमिका को विशेष महत्व दिया जाता है। बौद्ध नारीवादी विद्वान कर्मा लेक्से त्सोमो के अनुसार, महिलाओं के बौद्ध संघ में प्रवेश की परंपरा को प्रारंभिक बौद्ध काल में ही खोजा जा सकता है और आज भी अनेक एशियाई देशों में भिक्षुणी परंपरा सक्रिय है। हाल के दशकों में हिमालयी बौद्ध समाजों में महिलाओं के लिए उच्च धार्मिक शिक्षा और पूर्ण दीक्षा से जुड़े प्रयासों ने भी गति प्राप्त की है।

बौद्ध धर्म में महिलाओं की स्थिति का प्रभाव– बौद्ध धर्म द्वारा महिलाओं को प्रदान किए गए अवसरों का भारतीय तथा एशियाई समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ा।

आध्यात्मिक प्रभावः महिलाओं को यह विश्वास मिला कि वे स्वयं साधना करके आध्यात्मिक मुक्ति प्राप्त कर सकती हैं। इससे धार्मिक क्षेत्र में पुरुष एकाधिकार को चुनौती मिली।

सामाजिक प्रभावः भिक्षुणी संघ ने महिलाओं को परिवार के अतिरिक्त एक वैकल्पिक सामाजिक पहचान दी। विशेष परिस्थितियों में यह संस्था विधवाओं, परित्यक्त महिलाओं और सांसारिक जीवन से विरक्त महिलाओं के लिए महत्वपूर्ण आश्रय बनी।

शैक्षिक प्रभावः मठों ने महिलाओं के लिए धार्मिक शिक्षा के अवसर पैदा किए। अनेक भिक्षुणियाँ शिक्षिका और धार्मिक व्याख्याता बनीं।

मनोवैज्ञानिक प्रभावः थेरीगाथा जैसी रचनाओं में महिलाओं ने अपने दुःख, संघर्ष और मुक्ति की कथा स्वयं व्यक्त की। इससे महिला की व्यक्तिगत अनुभूति को धार्मिक साहित्य में स्थान मिला।

आधुनिक लैंगिक समानता पर प्रभावः आधुनिक बौद्ध महिला आंदोलनों ने प्रारंभिक भिक्षुणी परंपरा को लैंगिक समानता की ऐतिहासिक आधारभूमि के रूप में पुनः प्रस्तुत किया है। भिक्षुणी दीक्षा, धार्मिक शिक्षा और नेतृत्व आज बौद्ध महिला अधिकार विमर्श के प्रमुख मुद्दे हैं।

आलोचनात्मक विश्लेषण– बौद्ध धर्म में महिलाओं की स्थिति का मूल्यांकन करते समय तीन स्तरों में अंतर करना आवश्यक है।

पहलाः दार्शनिक स्तरः बौद्ध दर्शन में दुःख, कर्म और निर्वाण की चर्चा मूलतः मानवीय स्तर पर होती है। इससे महिलाओं की आध्यात्मिक क्षमता को स्वीकार करने का आधार मिलता है।

दूसराः संस्थागत स्तरः भिक्षुणी संघ को भिक्षु संघ के समान पूर्ण स्वायत्तता नहीं मिली। गरुधम्मों जैसी व्यवस्थाओं ने महिलाओं की संस्थागत स्थिति को सीमित किया।

तीसराः सामाजिक स्तरः बौद्ध समाज अपने समय की पितृसत्तात्मक संरचनाओं से पूरी तरह मुक्त नहीं था। इसलिए धार्मिक सिद्धांतों और सामाजिक व्यवहार के बीच अंतर दिखाई देता है।

इसीलिए यह कहना अधिक उपयुक्त होगा कि बौद्ध धर्म ने महिलाओं की स्थिति में क्रांतिकारी संभावनाओं का उद्घाटन किया, लेकिन ऐतिहासिक बौद्ध संस्थाएँ पूर्ण लैंगिक समानता तक नहीं पहुँच सकीं।

निष्कर्ष– बौद्ध धर्म में महिलाओं की स्थिति का इतिहास विरोधाभासों और परिवर्तनशीलताओं से भरा हुआ है। एक ओर बुद्ध के समय में महिलाओं के लिए भिक्षुणी संघ की स्थापना एक असाधारण सामाजिक–धार्मिक परिवर्तन थी; दूसरी ओर भिक्षुणियों पर लगाए गए विशेष नियम उनकी संस्थागत अधीनता को दर्शाते हैं।

महाप्रजापती गौतमी, खेमा, धम्मदिन्ना, पटाचारा और अन्य भिक्षुणियों का जीवन इस तथ्य का प्रमाण है कि प्रारंभिक बौद्ध धर्म में महिलाओं ने केवल अनुयायी की भूमिका नहीं निभाई, बल्कि वे साधिका, शिक्षिका, चिंतक और आध्यात्मिक गुरु भी बनीं। थेरीगाथा ने महिलाओं को अपनी आवाज में अपने जीवन और आध्यात्मिक अनुभव व्यक्त करने का अवसर दिया।

फिर भी बौद्ध धर्म के ऐतिहासिक विकास में पुरुष–प्रधान सामाजिक संरचनाओं का प्रभाव दिखाई देता है। भिक्षुणी संघ का कमजोर होना और कई क्षेत्रों में उसका समाप्त हो जाना इसका उदाहरण है। आधुनिक काल में भिक्षुणी परंपरा के पुनरुद्धार ने इस ऐतिहासिक असंतुलन को चुनौती दी है।

अतः बौद्ध धर्म में महिलाओं की स्थिति को न तो पूर्ण समानता की उपलब्धि कहा जा सकता है और न ही इसे केवल पितृसत्तात्मक व्यवस्था के रूप में समझा जा सकता है। इसका वास्तविक स्वरूप आध्यात्मिक समानता, सामाजिक अवसर, संस्थागत सीमाओं और ऐतिहासिक पितृसत्ता के बीच निरंतर संवाद में दिखाई देता है।

समकालीन संदर्भ में बौद्ध धर्म की सबसे महत्वपूर्ण विरासत यह है कि उसने स्त्री को आध्यात्मिक साधना और मुक्ति की सक्रिय पात्र के रूप में स्वीकार करने की संभावना को संस्थागत रूप दिया। आज महिलाओं की धार्मिक शिक्षा, भिक्षुणी दीक्षा और

नेतृत्व से संबंधित आंदोलन इसी ऐतिहासिक विरासत को नए सामाजिक संदर्भ में पुनर्परिभाषित कर रहे हैं। हिमालयी बौद्ध समाजों में महिला मठवासियों की उच्च शिक्षा और धार्मिक भूमिका का विस्तार इसका समकालीन उदाहरण है।

इस दृष्टि से बौद्ध धर्म में महिलाओं का इतिहास केवल धार्मिक इतिहास का विषय नहीं है, बल्कि यह भारतीय समाज में स्त्री की स्वतंत्रता, शिक्षा, आत्मनिर्णय और आध्यात्मिक समानता के विकास का महत्वपूर्ण अध्याय है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Rhys Davids, Caroline A. F.- Psalms of the Sisters (Therīgāthā), Pali Text Society, Oxford.
2. Horner, I. B.- The Book of the Discipline (Vinaya-Piṭaka), Pali Text Society, Oxford.
3. Crosby, Kate.- Theravada Buddhism: Continuity, Diversity and Identity, Wiley-Blackwell, 2013. महिलाओं के मठवासी जीवन और थेरवाद समाज में महिलाओं की भूमिका पर विशेष चर्चा।
4. Crosby, Kate.- Women in Monasticism तथा Women in Theravada Literature and Society, संबंधित शोध–अध्याय।
5. Tsomo, Karma Lekshe.- Buddhist Feminist Reflections, Oxford University Press, 2009.
6. Findly, Ellison Banks (ed.).- Women's Buddhism, Buddhism's Women- Tradition, Revision, Renewal, Wisdom Publications.
7. Strauch, Ingo et al.- Women in Early Indian Buddhism- Comparative Textual Studies, Oxford University Press.
8. Olivia, Nona.- "Women Buddhist Masters", International Journal of Dharma Studies, 2017.
9. Appleton, Naomi. "In the Footsteps of the Buddha?- Women and the Bodhisatta Path in Theravada Buddhism."
10. Owen, Lisa Battaglia.- "On Gendered Discourse and the Maintenance of Boundaries- A Feminist Analysis of the Bhikkhuni Order in Indian Buddhism," Asian Journal of Women's Studies.
11. Dash, Shobha Rani.- "On the Interpretation of Gender Discrimination in Buddhist Texts," Journal of Indian and Buddhist Studies.
12. Sahni, Pragati.- "Stories of Remarkable Empowering- Some Reflections on the Therīgāthā", Journal of International Buddhist Studies.
13. सिंह, उमा.– प्राचीन भारत में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति, विभिन्न ऐतिहासिक अध्ययनों के संदर्भ में।
14. त्रिपाठी, रामशरण.– प्राचीन भारत का इतिहास, भारतीय सामाजिक एवं धार्मिक इतिहास के संदर्भ में।
15. Dutt, Nalinaksha.- Early Buddhist Monachism, Motilal Banarsidass.
16. Gombrich, Richard.- Theravāda Buddhism.

*****